उनका दर्द

उस दिन सुबह वो खबर सुन कर ही निर्वाक् रह गई । कैसे .....? हे! भगवान !
ये तो स्पष्ट ही दिख रहा था किन्तु इतनी जल्दी यह घटित हो जायेगा । सोचा न था।
उनका चेहरा ही आंखों के आगे घूम रहा था। यथार्थ में घटित हो चुकी इस घटना पर मन मानस विश्वास ही नहीं कर पा रहा था।लेकिन इस पर विश्वास करने के बाद इंसानियत के नाते ये तय था कि एक बार तो मिलने मुझे जाना ही है वहां जिनके दुख की कल्पना से ही यह घटना अविश्वसनीय लग रही थी।

आज जब वह गांव निकट से निकट आते लग रहा है तो मन बार -बार भर आता। अब तक का रास्ता यद्यपि सबने बातों में ही पार करने की कोशिश की लेकिन सब के मन में उनके लिये बेहद दुख है और सभी एक दूसरे से अपना दर्द छुपा कर लगातार सहज बनने की कोशिश में लगे हैं। बातों का सिलसिला थोड़ा थमते ही वही चेहरा सबके सामने घूम जाता । उस चेहरे से जुड़े दूसरे चेहरों का दर्द भी लहरा जाता । तभी कोई चर्चा छेड़ जाता । जबर्दस्ती ठेली सी चर्चा यूं ही लंबी सी होती जाती और उनमें बीतता वह समय कुछ क्षणों के लिये उनकी याद को कम कर देता। तब लगता वो भी क्या कुछ क्षणों के लिये भी भूल पाती होगी जिनके जीवन का आधार ही वे थे।

गाड़ी सरपट दौड़ रही है। उनको लेकर भी कोई गाड़ी इसी रास्ते से गुजरी होगी..... मैं यही सोचने लगी.....।वो दोपहर, वो हवा, वह दिन उस गांव का कैसा भयानक रहा होगा।इस सदमे को झेलने वालों के लिये। वह दृश्य कल्पित कर ही नजारा सांय सांय करता कनपटी से टकराता है तो उनकी पत्नि ने यह कैसे झेला होगा। सदमा झेलने वाले की सहन की सीमा क्या हो सकती है। हिन्दु स्त्री के लिये तो इससे अधिक दुर्भाग्य हो ही नहीं सकता । तकदीर तो ऐसे बिखर बिखर जाती है कि पूरी उमर सिमटती ही नहीं है। एक ही हवा तैरती है चारों तरफ दुख, दर्द और आंसू । उनकी पत्नि विवर्ण चेहरा लिये दुख में कितनी कातर हो रही होंगी मैं ये अनुमान सहज ही लगा सकती हूं।
कैसे न कर पाउं ये? कई वर्ष मित्रवत् साथ गुजारें हैं हमने । छोटे छोटे सुख दुख में साथ चले हैं हम। मकान किराये की परेशानी या कामवाली की समस्या ,बच्चों की बिमारी या पढाई ,घरेलू मुश्किलें या पारिवारिक अड़चनें। हर दम साथ रहे हैं।
हम वहां स्थानांतरित होकर आये तब वे पहले ही रहते थे। अध्यापकीय जीवन बिताते ,सादा जीवन शांत विचार । न उधो का लेना न माधो का देना। अध्यापक की तनख्वाह में जितने पैर पसार सकते थे उससे भी कम में जीवन गुजारते। सीमित साधनों में जीवन गुजारना तय कर लिया था उन्होंने । बच्चों को भी इसी सांचे में ढालना चाहते थे ताकि भविष्य की विषम परिस्थितियों में वे भी निबाह कर सके । भविष्य किसने जाना है और कौन जान पाया है? सदा यही बात कहते । उन्होंने शायद समय की आहट पा ली थी तभी तो.....

जैसे -जैसे गांव निकट आया और गाड़ी ने गांव में प्रवेश किया मन लगातार भारी होता रहा। उनका वो सजा संवरा रुप याद आते ही मन उनके अतीत में भटकने लगा। इसी गांव में तो ब्याह करके आई थी वो नवोढ़ा।

..... अठारह वर्ष की किन्तु निश्छल अबोध बालिका सी। ग्यारहवी में पढ़ती वह दुनियादारी से निपट अंजान थी। जेठानी ने तो घूंघट उठाते ही झट से ढ़क दिया।'गुड्डी सी है बीनणी जतन से रखना देवरजी! और तब गुड्डी बीनणी का वह गुड्डा भी कैसे शरम से लाल गुलाबी हो गया था। उसने दोनों भोले पंछियों की नजर उतारी थी । दोनों को पूरा -पूरा समय साथ बिताने देती। सासू अवसर ही डांटती जेठानी को कि अरे!सारा काम खुद ही करती रहोगी तो नई देवरानी सिर चढ़ बैठेगी फिर निबाह कैसे होगा!
लेकिन वो हंस देती और कहती मां बच्चे ही तो है चहकने दो। काम के लिये तो जिंदगी पूरी पड़ी है। ये समय लौट कर थोड़े ही आयेगा। और सचमुच वह समय लौट कर न आया। धीरे- धीरे गुड्डी बीनणी में

परिपक्वता आई लेकिन उन्होंने कभी किसी को शिकायत का मौका न दिया। जेठानी जी तो उन्हें बड़ी बहन से भी न्यारी लगती। उन जेठानी ने इस जोड़े का टूटना पहले पहल सुना होगा तो क्या वह दुख के गर्त में न डूब गई होगी। .....

गांव के चौंहटे में गाड़ी रुकी। मुझे उतरने का इशारा हुआ लेकिन मेरा मन तो दूर उस चेहरे से जा मिला और पैरों ने जैसे हिलने से मना कर दिया। निर्विकार नजरों से लगातार कहीं देखती रही। चेतना लौटी और अपने आपको गाड़ी से नीचे ठेला । वह घर सामने ही नजर आया । यहीं ऐसे ही कभी वह दुल्हन बनी उतरी होगी सकुचाई लजाई सी । यहीं वह उनको लिये भी आई होगी। अपने जीवन का निर्जीव रुप। निढाल सी सदमे से सहमी बेजान चली होगी । और ....और यहीं मैं.....।यह जगह ..... यह भी तो ये सब झेल रही है। न जाने कितने -कितने ,किसके -किसके दर्द पी कर पत्थर हो गई है यह धरती भी । सब सह जाती है पाषाण सी । स्त्री का दर्द देख देख कर वह जड़ हो गई किन्तु इंसान जड़ नहीं हो सकता । उसे चलते ही जाना है दुख में रोकर दर्द को पीकर और सुख में.....? सुख तो कभी होता ही नहीं है। हर कोई इसका स्वाद चखे ऐसी तकदीर नहीं होती । हो तो भी दुख की आशंका दहलीज पर दस्तक दिए रहती है। कब प्रवेश कर जाये पता नहीं? कितनी ही उंची दीवारें चिनवा ले खिड़कियां तो होती ही है । चुपके से प्रवेश कर जाती है। लेकिन उनके शायद गृह प्रवेश के साथ ही दुख प्रवेश कर गया था और घात लगाकर बैठ गया। जब दो बच्चों के साथ अपने जीवन को स्वर्ग समान समझे बैठी थी कि उसने हमला कर दिया।

.....लेटे लेटे एक दिन उनके पति को सिर दर्द उठा । हथौड़े से उन वारों को झेलतें वह पसीने से लथपथ हो हांफने लगे। यूं भी भारतीय स्त्री का जीवन एक अनजानी आशंका से हरदम धड़कता रहता है वो है पति की स्वस्थता को लेकर। उसकी एक भी पीड़ा वह अपने उपर हजार गुना महसूस करती है क्योंकि उसके जीवन का सुख, सब रंग, आचरण सब पति पर पूरी तरह निर्भर करता है। उसका न रहना दुर्भाग्यपूर्ण होता है। इसीलिये उसका जीवन आशंका में ही बीतता है ।दुख में दुखी रहकर और खुशी में दुख के प्रति आशंकित रहते।

.....यही उसने भी सोचा होगा की कि ये क्या हो गया इन्हें? हे!ईश्वर इन्हें जल्दी ठीक करना। कुछ हो न जाये। उस वक्त तो वह दर्द कुछ दवाओं से बैठ गया। कई दिन ठीक रहा लगा कि शुक्र है भगवान का कि एक बार उठ कर रह गया। ये विचारना ही था कि उस दर्द ने फिर आक्रमण किया। स्कूल में बेहोश हो गये दर्द से तड़पकर । दो लोग उठा कर घर लाये। ये देख वह गहन तक दहल गई। फिर चला जांचों का सिलसिला शुरु हुआ। कुछ दिन बाद उसे बताया गया कि सब ठीक है। बस यूं ही पीड़ा हो गई थी।

पर स्त्री अपने पति को पढ़ न सके ऐसा भला कहीं हो सकता है? वह संतुष्ट न हुई । मन न माना। उसका डूबता हदय कुछ और ही इशारा कर रहा था। यदि सब बहुत ही ठीक ठाक होता तो वे ऐसे खोये-खोये यूं गुमसुम न रहते। उसका खुद का दिल न बैठता। इंसान बिमारी निकलने के बाद कमजोरी रहते हुए भी राहत महसूस करता है लेकिन वे अवसर ही हड़बड़ा कर आसूं पोंछते नजर आते। उसका सामना करने में उसकी आंखें में देखने से भी कतराते। वह लाख कसमें दे देकर पूछती। वे हंसकर टाल देते।

एक दिन रिपोर्ट उसके हाथ लग गई। वे स्कूल से लौटे तो देहरी पर पथराई आंखें ,बिखरे बाल निढाल सी बुत बनी पड़ी थी। देखकर दया उमड़ आई उनको। उठा हिलाया डुलाया लेकिन बस टुकुर टुकुर देखती रही। कई दिनों तक ऐसे ही रही थी। मैं अवसर मिल आती। उन्हें होश ही नहीं था। सुध बुध बिसरा कर न जाने क्या कल्पना कर वह----। ब्रेन ट्यूमर का पता चलने से हीवह हालत हो गई थी तो साक्षात् यह सदमा -----।

अब घर से भी रुंदन की आवाजें आने लगी थी। इसमें उनका भी रुंदन होगा?कितना रोयेगी अपनी तकदीर पर? कोई सीमा नहीं है रोने की जबकि दुख असीम है।
भारी कदमों से ही चल पा रही थी मैं। वह घर भी आ गया।जिसका एक पहिया छूट चुका है। एक पहिये का लंगड़ाता यह घर कितना और कैसे चल पायेगा।

.....वे भी तो चलने फिरने में कमी महसूस करने लगे थे। वो तो तब से ही जिदंगी से बेजान हो चुकी थी। बस घिसट रही थी। उनको घर आने में घड़ी भर की भी देर हो जाती तो बौखलायी सी अपने बाल नोंचने लगती । संभाले न संभलती । हम भी क्या सान्त्वना देते कि घबराओ मत, कुछ नहीं होगा जबकि हम खुद आशंकित रहते। "कोई लाओ .....उनको जल्दी लाओ.....अरे एक बार ....दिखा दो ....कह दो ठीक है....."का कातर स्वर सुना न जाता । धीमे-धीमे कदमों से वह आते दिखते तो हम भी जैसे जी जाते। उनको तो जैसे नई जिदंगी मिल जाती । नौकरी के अलावा कहीं जाने न देती। रोज-रोज मर कर वह जीना सीख गई थी। कहीं जाते तो आंखों के ओझल होने से लेकर लौटते नजर आने तक देहरी पर बेचैनी से प्रतीक्षा करतीआशा निराशा में डूबती उतराती। उन्हें आता देख पल्लू मुंह में दबाकर भीतर दौड़ पड़ती।
उनके जाने के बाद उसका क्या होगा? कैसे झेलेगी ?ये सोच-सोच कर वे झुरते, दुखी होते। खुद से ज्यादा उन्हें उसकी व बच्चों की चिंता अंदर ही अंदर खाये जाती। बेचारी!.....किस्मत की मारी! क्या तकदीर लेकर आई है मेरे पीछे । हरदम मरते ही रहना। यही देखा है इन महीनों में उसने। एक अनहोनी की आशंका हर समय ही फन फैलाये रहती कि कहीं सच न हो जाये। एक खामोशी भांय-भांय मनहूस सी पांव फैला रही थी। और धीरि-धीरि बिमारी ने भी पांव पसारने शुरु कर दिये।
हाथ धीरे धीरे कमजोर से होने लगे। शर्ट के बटन बंद करना भी बहुत मुश्किल सा होने लगाा। लेकिन कैसे कहे और किससे कहे?बच्चे कुछ सहमे सहमे भयग्रस्त दिखते। कभी कभी उनकी अठखेलियां बैठे देखते रहते। आंखें डबडबा आती । इनका बचपन जल्द ही गुम हो जायेगा।कभी पढ़ाई के लिए डपटते पर अगले ही पल संभल जाते। कुछ ही दिनों की बात के लिए क्यूं डांटू। पढेगें ही ,नहीं तो किसका सहारा होगा उनको। अपने जीवन की जंग उनको अकेले ही तो लड़नी है पिता की छाया वाली निश्चिंता से तो वे जल्दी ही वंचित हो जायेगें। कुछ समय के लिये ही सही इनका मुस्कुराता चेहरा तो देख तृप्त हो लूं । उन जहरीले क्षणों से अभी ही आतंकित नहीं करना चाहते थे बच्चों को। पितृहीन बच्चे कैसे दयनीय हो जाते हैं, ये कई परिवारों में देखा है। अब उनके बच्चे भी.....

.....पत्नि को कैसे बताये ? पहले ही मुर्दा सी है। निकट भविष्य जान लेगी तो....? कभी सोचते सब कुछ सच बता दे उसे ताकि सदमे के लिये तैयार रहे। मन का दर्द ये छटपटाहट चुपचाप नहीं पी जाती। पत्नि से जी भरकर बातें करना चाहता हूं, बहुत कुछ भीतर मचलता है उसे उंड़ेलना चाहता हूं,बच्चों को गले लगाकर महसूसकर रो लेना चाहता हूं। अपना प्यार प्रकट करना चाहता हूं। सोच-सोच वह फड़फड़ा उठते लेकिन कुछ फिर न जाने क्या सोच कर रुक जाते। कदम आगे ही नहीं बढते। नहीं...नहीं....उसे और कितना मारुं? मरना तो है ही उसे ताउम्र। बेरंग वस्त्र,कोरी मांग,सूने हाथ ,सूनी आंखें लिये कोई साया नजर आता। नही!!!!!!!!!!!!!!!!वे चीख उठते। जिससे अथाह प्यार करते हैं उसे ही अथाह दुख देकर जाना है। कितनी विवश है वो और कितने मजबूर वे। एक ओर वह अपने पति को तिल तिल मरता देख रही है जो सदैव ही प्राणों से प्रिय लगे ।दूसरी ओर वे हैं, जिसके साथ सुख दुख में संग रहने के कई कई वचन उन अनमोल क्षणों में लिये उनको किसी भी प्रकार से निभाने में असमर्थ है।उन सुखदायी अनमोल दिनों में वह समस्त खुशियां उनके लिये ला देने की तमन्ना रखते थे। सदैव यही सोचा कि अपनी पत्नि को कभी भी दुखी नहीं करेगें चाहे परिस्थितियां कैसी ही दुर्गम क्यूं न होगी लेकिन इस परेशानी के बारे में तो उन्होंने सपने में भी कल्पना नहीं की थी। इस पर कोई जोर भी नहीं ।औरत की समस्त खुशियों की धुरी पति होता है। और अब वे ही.....। अब सचमुच स्त्रियों की दशा पर चिंता होती । काश !समाज ने पतिहीन स्त्रियों के जीने की कोई पगडंडी निकाली होती। वे

व्यथित हो जाते । हे!ईश्वर मेरे अपनों को ही इतना बड़ा दुख दे जाउंगा। निरुपाय रोते। उनकी बिमारी पूरे परिवार को दुख के गर्त में ढकेलती जा रही थी लेकिन सब बेबस थे।

.....धीरे -धीरे निशक्तता बढ़ने लगी। ऐसी हालत को वो बस दीवार पर सिर टिकाये सूनी दर्द भरी आंखों से तकती रहती जैसे उस चेहरे को पी जाना चाहती हो।इस तरह आंखों में बसा लेना चाहती हो कि कभी आंखों से ओझल ही न होने पाये। दोनों की ही आंखों से कभी आंसू ढुलकते कभी पत्थर की तरह बेजान । बच्चे मां के पीछे दुबके दुबके पिता को भय भरी आंखों से देखते। कभी उन्हें अपने पास बिठाकर अपने दुर्बल कांपते हाथों से सिर पर हाथ फेरते कुछ कहना चाहते लेकिन गला रुंध जाता पहले ही । पत्नि से अब जमा पूंजी की बात कहना चाहते लेकिन कमजोर होती जबान से स्पष्ट कुछ न कह पाते । अंदर भरा दर्द उमड़ता लेकिन शब्द साथ न होते।

कहीं पढ़ा कि ब्रेन ट्यूमर का ऑपरेशन एक आशा है। जानकर ही जैसे आधी जी गई। डॉक्टर साहब के पैरों में अपने गहने और जमा पूंजी रख दी। हाथ जोड़े लड़ियां बहती आंखों में क्या अरदास थी ये डॉक्टर साहब अच्छी तरह समझ सके। रोज ही ऐसी भावनाओं से अपनी आंखें और मन नम महसूस करते है। और हर दुख का रंग एक सा गहन दर्द भरा पीड़ादायी होता है। डॉक्टर साहब उनके सिर पर पिता की भांति हाथ फेर कर सान्त्वना देते रहे। लेकिन उनकी आंखों में डॉक्टर साहब के लिये बेहद आशायें भरी थी । आखिर उनकी आशा के घुटने तोड़ने पड़ गये यथार्थ से परिचित कराने के लिये। "बहन! कुछ ही दिन शेष है उससे भी हाथ धो बैठोगी ।" वह बस विस्फारित नेत्रों से तकती रही। जब डॉक्टर साहब सिर झुकाये आगे बढ़ गये तो वे रीढ़विहीन की तरह लुढ़क गई। जैसे बस एक उन्ही पर ईश्वर की भांति आशा टिकी थी । और ईश्वर का सहारा हटते ही .....।

.....साथ खड़े सभी परिवार जन का भी लंबे समय तक रोका आशा और धैर्य का सैलाब नियति के आगे आखिर उमड़ पड़ा। उन सबके आंसुओं में उसे अपना व बच्चों का शापित जीवन निश्चित सा नजर आया।

.....उन दुख भरे दिनों को भी वह बीतने नहीं देना चाहती थी । किसी भी कीमत पर उन्हें थामकर जीवन जीना मंजूर था। उनकी मौजूदगी ही अब उनके लिए किसी स्वर्ग को पा लेने से कम न थी। भगवान से यही प्रार्थना करती कि भले ही ऐसे ही रहे ,मैं सेवा कर लूंगी ताउम्र पर इन बच्चों का सहारा व मेरा सुहाग न छीनना। लेकिन ईश्वर का ध्यान कहीं और था उनकी आवाज उन तक पहुंची ही नहीं। उस दिन जब उन्हें अस्पताल ले जाया जा रहा था तब लग गया था कि ये आखिरी बार है। उनके भाई ने उनके गले लग कर जार-जार रोते हुए कहा "दीदी! कुछ बात करो जीजाजी से, कुछ कह लो मन में मत रोको फिर शायद..... !"तभी तो झटके से उठ कर उन की ओर दौड़ पड़ी लेकिन बीच में ही कटे पेड़ की तरह गिर पड़ी और चेतनाशून्य हो गई। स्टेचर पर लेटे उनको उनके पास लाया गया। दुर्बल लेकिन आंसुओं से लबालब आंखों से एकटक देखा और एक गहरी दर्द भरी सांस लेकर हाथ जोड़ने की कंपकपाते हाथों से असफल कोशिश की। दोनों बच्चों को किसी ने उनकी ओर किया । आखिरी बार एक दूसरे को देख ले। वे पापा पापा कहते हिचकियां भर भर रोने लगे। ज्यादा तो नही पर इतना तो वे अबोध समझ ही गये कि कुछ बुरा होने वाला है।उन्होंने अपने बच्चों के सिर कांपता हाथ फेरना चाहा लेकिन दुख से छलक रहे उस दृश्य से आंखें फेर ली और खुल कर सुबक पड़े। यह देख सबका ही हृदय फट पड़ने सा हो गया।

घर के भयावह कमरे के बाद चौक से सटे कमरे तक पहुंची। कमरे में नीम अंधेरा था। मुंह भींच कर जबड़े कस लिये मैंने । उन्हें हिम्मत देउंगी ,मन ही मन सोचा मैंने। आंखें अंधेरे की कुछ अभ्यस्त हुई तो देखा एक हड्डियों का ढांचा बेजान बेरंग सा किसी परिजन की गोद में पड़ा था। भींचे दांत, विस्फारित आंखें और ऐठें हुये हाथ। बिखरे बिखरे कपड़े ।तभी एक स्त्री उनके नाक को दबा कर दांतों का जुड़ाव खोलने की लगातार कोशिश करने लगी । किसी ने कहा इन चार दिनों में पचासों बार दांत जुड़े हैं। दुख या दर्द से विदग्ध होते ही जहां शरीर की सहन शक्ति खतम होने लगती है वहां तन यह

ऐसा कवच ओढ लेने की कोशिश कर दर्द या दुख की पराकाष्ठा को झेलता है। उनके मन के दर्द की तो कोई सीमा थोड़े ही है। मुझे लगा उनकी धड़कन भी चल रही है यही गनीमत है। ऐसे में धीरज और हिम्मत के शब्द बेमानी से लगते हैं। क्या कहूंगी इस हालात में दुखी मत होओ सब ठीक हो जायेगा ? विधवा स्त्री के जीवन को समाज कब ठीक से चलने देता है। क्या मैं ये जानती नहीं।

फिर उस स्त्री ने उनके गाल थपथपा कर कहा " देख उठ !!तेरी जीजी आई है.....उठ.....आंखें खोल ..... कोशिश कर .....तुझसे मिलने आई है....एक बार आंख तो खोल ....." कहते कहते ही वह स्त्री पल्लू आंखों पर रख खुद ही सुबकने लगी ।कुछ पलों बाद वह स्त्री खुद को संभाल कर फिर उन्हें हिला डुला कर उठाने की कोशिश करने लगी। मैं बुत बने खड़ी ही रह गई। लगा जैसे अब कदम उठ नही पायेगें।। हे! भगवान ऐसा हाल हो गया है। उनकी तकदीर पर तरस खाने की सुगबुगाहट जारी थी। आगे के जीवन में जितनी भी परेशानियां आने वाली थी उनका वाचन हो रहा था। सुन सुन कर मेरे दिल का भारीपन बढने लगा। किसी ने कहा होश में भी कम ही रही है और एक शब्द भी मुंह से नही निकाला है तब से। दिल खोल कर रोई भी नहीं है। सीने में बोझ भरा है लेकिन रुलाई नहीं फूट रही। दुख से पाषाण हो गई है। हर तरह से रुलाने की कोशिश की पर व्यर्थ।दोनों बच्चों की निरीह सूरत देख कर भी इनका हिया नहीं उमड़ सका। आंखों की पुतलियां तक नहीं हिली। ऐसे काठ बनी रही तो मानसिक रोगियों सी स्थिति न हो जाये। बच्चों को कौन संभालेगा? सच ही है चार दिन दुख में दुख जताने आते है लोग । आखिर तो शरीर का बोझ पैरों को ही उठाना है। हमेशा का दर्द तो येन केन प्रकारेण स्वयं ही झेलना पड़ेगा।आदत डालनी पड़ेगी ।

उनकी यह दशा देखकर मेरे मन का गुबार फूट पड़ने को आतुर हुआ। पीली कृशकाया को देखते देखते मेरी दृष्टि उनके चेहरे पर धंसी पथराई आंखों पर अटक गई। उनका दर्द मेरी आंखों में बह चला।भावों की उष्मा दर्द के सेतु बंध पर चल उन तक पहुंच गया तभी तो वो पथराई आंखें एक पल झपक गई। हिली डुली वह पाषाण । शिला के भीतर कुछ पिघला ,कुछ चेतना हुई और चेहरे की भाव शून्यता भरने सी लगी । चेहरा जबड़े होंठ नरम पड़े .....थोड़ा लरजे.....आंखें दोतीन बार झपकी ....और आंखों से गर्म लावों सोता फूट पड़ा.....मैंने अपनी प्यारी सहेली को थामने के लिए अपनी बांहें फैला दी .....

किरण राजपुरोहित नितिला